परिचय

आराधना के लिए बुलाहट

मार्च 1993 में मेरी पत्नी बारबरा और मैं दस साल के अन्तराल के बाद ज़ाम्बिया लौटे। हमने नामवियांगा क्रिश्चियन सेकंडरी स्कूल से गाड़ी किराए पर ली और रविवार सुबह सिआकासासा गांव की ओर चले गए। दस साल पहले हमने गांव में कलीसिया स्थापित करने में सहायता की थी और वहां मसीही लोगों को भवन बनाने में सहयोग दिया था। 10 बजे के लगभग भवन में पहुंचने पर हमें कोई वहां दिखाई नहीं दिया। हम एक पेड़ के नीचे यह सोच कर खड़े हो गए कि पता नहीं कलीसिया आती भी है या नहीं। हमें अधिक देर आश्चर्य नहीं रहा। कुछ मिनटों के बाद एक लड़का आया और उसने लोहे की छड़ी से पेड़ से बंधी एक पुरानी घण्टी बजाई। यह गांव वासियों को ''आराधना के लिए बुलाने'' का संकेत था कि उस दिन आराधना के लिए उनके यहां बाहर से लोग आए हैं।

आधे घण्टे के अन्दर-अन्दर सब लोग वहां पहुंच गए। एक-एक करके वे अलग-अलग दिशाओं में से एक झाड़ी से निकलकर आए। उन्होंने बड़ी गर्मजोशी से हमारा स्वागत किया और जब तक कि यह सुनिश्चित नहीं हुआ कि सब आ गए हैं, वे पेड़ के नीचे हमारे पास ही रहे। भवन के अन्दर एक ओर पुरुष और दूसरी ओर स्त्रियां बैठ गईं। सीटें ''Y'' के आकार में लकड़ियों को जोड़कर जमीन में लगाई गई थीं।

उनके कुछ गानों की धुन हमारे लिए जानी-पहचानी थी, पर कुछ गीत टौंगा भाषा में गाये गए थे। कुछ गीत बिल्कुल नये थे, जिनमें अफ्रीकी धुन थी। अफ्रीका में आराधना का यह अनुभव निराला था। यह आराधना वैसे नहीं थी जैसे हम किया करते हैं, पर मेरे मन में कोई संदेह नहीं था कि वहां आराधना हो रही है।

एक अन्य अवसर पर मैं मद्रास, भारत में वाईएमसीए में इकट्ठी होने वाली कलीसिया में बोलने के लिए भाई पीटर सॉलमन के साथ गया। हमारे पहुंचने से पहले आराधना आरम्भ हो चुकी थी। वहां कोई बैंच या कुर्सियां नहीं थीं। आराधना करने वाले लोग फर्श पर बिछी दरियों पर बैठे या घुटने टेके हुए थे। हमारे पहुंचने के समय अधिकतर लोग घुटनों के बल होकर सिर झुकाए हुए थे। एक जन प्रार्थना में अगुआई कर रहा था। दरवाज़े में प्रवेश करते ही सॉलमन ने दोनों घुटने टेक दिए। मैंने भी ऐसा ही किया। परमेश्वर के सिंहासन के आगे झुकी हुई मण्डली का दृश्य मन को छू लेने वाला था। मेरे लिए यह साफ था कि वहां आराधना हो रही है।

मैंने पांच अलग-अलग अफ्रीकी देशों, भारत के कई अलग-अलग क्षेत्रों, दक्षिणी अमेरिका के दो देशों और केन्द्रीय अमेरिका के देशों के अलावा विभिन्न केरिबियन टापुओं में आराधनाओं में भाग लिया है। (पवित्र शास्त्र की सीमाओं के भीतर) वे सब अलग-अलग हैं, पर फिर भी एक जैसे हैं। आराधना सभाओं में मैंने अपनी उम्मीदों में लचीला होना सीखा है। बेशक कुछ आराधना सभाएं दूसरों से अधिक आनन्द देने वाली और निजी लाभ पहुंचाने वाली हैं, पर मैंने सीखा है कि

मेरा आराधना करना या न करना सभास्थल में होने वाली बातों की अपेक्षा मेरे अन्दर चल रही बातों पर अधिक निर्भर करता है।

आराधना क्या है?

क्या आराधना कलीसिया की विभिन्न गतिविधियों के नीचे कहीं दबी हुई है? क्या यह हमारे आराधना स्थल के किसी कोने में ढूंढ़े जाने की प्रतीक्षा में झांक रही है? आराधना की मेरी सबसे पहली सोच ''चर्च जाना'' थी। प्रचारकों के बार-बार समझाने के बावजूद कि हम ''चर्च जा रहे'' नहीं होते बल्कि ''आराधना के लिए जा रहे'' होते हैं। मेरे मन में यह अवधारणा पक्की थी। यदि आराधना वह है, जिसमें सचमुच हमें ''जाना'' है तो हमारे लिए यह जानना आवश्यक है कि यह क्या है। ए. डब्ल्यू. टोज़र ने कहा है, ''आम तौर पर जिसे आराधना कहा जाता है वह है नहीं।''[1]

''प्रेम'' की तरह ही ''आराधना'' एक प्रचलित शब्द है, जिसे किसी ऐसे शब्द में परिभाषित करना कठिन है, जिसे आज के लोग पूरी तरह समझ पाएं। यह ऐसी चीज़ के बारे में है, जिसे कुछ लोग तो चाहते हैं जबकि दूसरे इससे घृणा करते हैं। कुछ लोग परमेश्वर की उपस्थिति में होने के ताज़गी देने वाले, संतुष्टि देने वाले, मन को सुकून देने वाले अनुभव को पाना चाहते हैं। अन्य आराधना को समय खराब करने के लिए सबसे उबाऊ तरीके के रूप में मानते हैं।

एल्फ्रेड पी. गिबस ने कहा है, ''गुलाब की तीखी सुगन्ध या शहद के आनन्दित करने वाले स्वाद की तरह ... अर्थ *विवरण देने* से *अनुभव करना* आसान है।'' हो सकता है कि गिबस सही हो, पर फिर भी यह आवश्यक है कि हम आराधना की बाइबली परिभाषा को ढूंढ़ें। वरना हमें पता नहीं चल सकता कि जो हम अनुभव करते हैं वह आराधना है भी या नहीं। यह कहने के बाद गिबस कई स्रोतों से ली गई परिभाषाओं को गिनाने लगा। ''आराधना'' की इन परिभाषाओं में से कुछ इस प्रकार हैं (1) ''ईश्वरीय पक्ष के बोध में, कृतज्ञ मन का उमड़ना''; (2) ''परमेश्वर की उपस्थिति में आराम कर रहे मन का बाहर आना''; (3) ''हृदय का अपनी आवश्यकताओं के साथ या अपनी आशिषों के साथ नहीं, बल्कि स्वयं परमेश्वर से काम''; (4) ''ऐसे हृदय का उछलना, जिसने पिता को दाता, पुत्र को मुक्तिदाता और पवित्र आत्मा को अपने अन्दर अतिथि के रूप में माना है।''[3]

रिक्क एचले ने आराधना की परिभाषा ''परमेश्वर को जैसा वह है मानने, अपने आप को जैसे आप हैं मानने और उसके अनुरूप ग्रहण करने'' के रूप में दी है।[4] आराधना परमेश्वर के आदरणीय होने और मनुष्य की दुर्बलता की पुष्टि करती है। ये सभी परिभाषाएं आराधना को समझने में हमारे लिए सहयोगी हो सकती हैं, परन्तु इनमें से कोई भी आराधना की पूरी व्याख्या नहीं कर सकती। यहां पर मैं और परिभाषा देने का प्रयास नहीं करूंगा। इस शृंखला में पाठों के साथ आगे बढ़ते हुए आराधना के अर्थ का स्पष्ट होना मिश्रण बनेगा। अगले एक पाठ में हम यूनानी शब्दों के अर्थ को देखेंगे जिनसे ''आराधना'' शब्द अनुवादित किया गया है।

आराधना करना आवश्यक क्यों है?

जब हम आराधना करते हैं तो हम सबसे निर्बल होते हैं, क्योंकि उस समय हम अपनी

मानवीय निर्बलताओं के प्रति अधिक जागरूक होते हैं; तौ भी आराधना करने के समय हम सबसे मजबूत होते हैं क्योंकि हम सर्वशक्तिमान की सामर्थ से शक्ति लेते हैं। आराधना के लिए बुलाता परमेश्वर ही है। उसने हमें ऐसे ही बनाया है। लोगों को ऐसा बनाया गया है कि बिना आराधना के हम खाली और अधूरे हैं। परमेश्वर को मालूम है कि यदि हम उसकी आराधना नहीं करते तो हम किसी और की आराधना करने का प्रयास करेंगे। उसने हमें अपने स्वरूप पर अर्थात अपने स्वभाव के विस्तार में बनाया (उत्पत्ति 1:26; देखें 2:7)। उसने हमें यहां सदा तक रहने के लिए नहीं बनाया। उसने हमें सदा तक अपने साथ रहने के लिए बनाया। इसलिए वह हमें अपनी उपस्थिति में लाना चाहता है कि हम उसे और बेहतर जान पाएं और जोशपूर्वक उसका अनुसरण करें। उसे मालूम है कि लोग जिसकी आराधना करेंगे, उसी के जैसे बनने लगेंगे। यदि हम उसकी आराधना करते हैं तो हम उसके जैसे बनने लगेंगे। नीचे दी गई आयतें इसी सच्चाई पर ज़ोर देती हैं:

> और जैसे हम ने उसका रूप जो मिट्टी का था धारण किया वैसे ही उस स्वर्गीय का रूप भी धारण करेंगे (1 कुरिन्थियों 15:49)।
>
> परन्तु जब हम सब के उघाड़े चेहरे से प्रभु का प्रताप इस प्रकार प्रगट होता है, जिस प्रकार दर्पण में, तो प्रभु के द्वारा जो आत्मा है, हम उसी तेजस्वी रूप में अंश अंश कर के बदलते जाते हैं (2 कुरिन्थियों 3:18)।
>
> हे प्रियो, अभी हम परमेश्वर की सन्तान हैं, और अब तक यह प्रगट नहीं हुआ, कि हम क्या कुछ होंगे! इतना जानते हैं, कि जब वह प्रगट होगा तो हम भी उसके समान होंगे, क्योंकि उसको वैसा ही देखेंगे जैसा वह है (1 यूहन्ना 3:2)।

आमतौर पर परमेश्वर वास्तव में चाहता है कि मनुष्य का सम्बन्ध उससे फिर बहाल हो जाए। उसे मालूम है कि यदि हम उसकी आराधना करते हैं तो झूठ बोलना, धोखा करना, चोरी करना और अनैतिक जीवन जीना हमारे लिए कठिन हो सकता है। परमेश्वर हमें साफ करके उस पर जो उसने क्रूस पर हमारे लिए किया है, हमारे विश्वास के द्वारा हमें अपने साथ फिर से मिलाना चाहता है। वह हमें आराधना के द्वारा साफ रखना चाहता है। उसे मालूम है कि यदि हम आराधना के द्वारा उसके साथ सम्बन्ध बनाए रखेंगे तो हमें अपने आस-पास के संसार के साथ उस सम्बन्ध और आनन्द के लाभ प्राप्त होंगे। इसलिए आराधना हमारे भले के लिए है, न कि उसके भले के लिए।

आराधना परमेश्वर के बारे में विचार का जश्न मनाना या उसके स्वभाव का एक पहलू ही नहीं, बल्कि अपने आपको परमेश्वर की उपस्थिति में लाना है। उसकी आराधना करना उसमें तल्लीन होना, उसमें लपेटे जाना, उसके आश्रय की शान्ति और सुरक्षा, उसके ओट की गर्माइश महसूस करना है। उसकी उपस्थिति के प्रकाश को अपने अन्दर लेते हुए उसके तेज के प्रकाश में सेंक लेना हमें उसके जैसा बना देता है। इससे हमें उसके दोबारा आने पर उसकी अनन्त उपस्थिति के लिए तैयार होने में सहायता मिलती है। लोग उसी के जैसा बनने लगते हैं, जिसके साथ वे अधिक समय बिताते हैं। यह बहुत ही सरल ढंग है, आराधना उसे जैसा और बनने के लिए परमेश्वर के साथ समय बिताना है। जब हमें समझ आ जाता है कि वह कौन है तो हम उसका सम्मान और स्तुति करते हैं क्योंकि वह इस योग्य है। ''परमेश्वर की आराधना और महिमा करना

किसी भी पुरुष या स्त्री का सबसे बड़ा लक्ष्य है।''[5]

आराधना कब करनी चाहिए?

आदर्श रूप में, आराधना मसीही लोगों की आम सभाओं से अधिक होनी चाहिए। वचन में आराधना के अधिकतर निर्देश व्यक्तिगत या पारिवारिक आराधना के संदर्भ में हैं, परन्तु मैंने व्यक्तिगत या पारिवारिक आराधना के विषय में इतने प्रश्न नहीं सुने। क्या इसका अर्थ यह हो सकता है कि लोग व्यक्तिगत या पारिवारिक आराधना नहीं करते?

जब हम ''आराधना'' पर विचार करते हैं तो हमारे ध्यान में आमतौर पर मसीही लोगों की आम सभा ही आती है। परन्तु यदि हम परमेश्वर की व्यक्तिगत आराधना नहीं करते तो हम रविवार (अर्थात ''सप्ताह का पहला दिन''), जिससे कई बार ''प्रभु का दिन'' भी कहा जाता है, को होने वाली उसकी आराधना के लिए आत्मिक रूप से तैयार नहीं हैं। (देखें प्रेरितों 20:7; 1 कुरिन्थियों 16:2; प्रकाशितवाक्य 1:10.)[6]

आराधना कैसे करनी चाहिए?

आरम्भिक कलीसिया के आराधना करने की बेशक कुछ विशेष बातें और कुछ प्रस्तुतियां हैं, परन्तु उनकी सभाओं को चलाने के लिए 1 कुरिन्थियों 11-14 में दिए सामान्य नियमों का पालन किया जाता था। बाइबल के कई छात्र 1 कुरिन्थियों 11-14 को सभा को ध्यान में रखकर लिखी गई मानते हैं। मेरा निजी विश्वास है कि चारों अध्यायों का संदर्भ सभा ही है। कुछ लोग यह सवाल करते हैं कि अध्याय 11 की पहली सोलह आयतें आराधना सभा में किए जाने वाले व्यवहार की बात करती भी हैं या नहीं, परन्तु 11:17 से आगे ऐसा कोई सवाल नहीं है। ''इकट्ठे होने'' वाक्यांश स्पष्ट तौर पर संदर्भ बता देता है। ये मसीही आराधना में जो भी करते थे और हम जो भी करते हैं, उन सब पर यही नियम लागू होंगे।

क्या करें

1. *हमें एक दूसरे की बेहतरी के लिए इकट्ठे होना आवश्यक है* (11:17)। अगली आयत उनकी सभाओं में बन चुके गुटों और फूटों को वर्णित करती है। अपनी सभाओं में वे जो कुछ करते थे, उनमें से अधिकतर बातें उनके आत्मिक विकास के लिए हानिकारक थीं। उनके कार्य अपनी ओर निर्देशित होने के बजाय परमेश्वर की ओर निर्देशित होने चाहिए थे।

2. *हमें मन में उद्देश्य रखना आवश्यक है* (11:27-29)। इस नियम का संदर्भ में प्रभु भोज में भाग लेने में है। ''अनुचित रीति'' वाक्यांश (आयत 27) का अर्थ स्पष्टतया ''गलत उद्देश्य और गलत सोच के लिए'' है। कुरिन्थुस में सभा का और विशेष तौर पर प्रभु भोज का उद्देश्य, गुम हो चुका था। पौलुस ने इन मसीहियों को समीक्षा करने (आयत 28) और असली उद्देश्य को पहचानने का आग्रह किया।

3. *हमें एक देह के रूप में काम करना आवश्यक है* (12:12-21)। परमेश्वर चाहता है कि उसके लोग आराधना के लिए इकट्ठे हों (इब्रानियों 10:25)। आराधना ऊपर को और सीधे भी होनी चाहिए यानी यह केवल परमेश्वर के साथ सम्बन्ध बनाने के लिए ही नहीं, बल्कि एक-दूसरे

के साथ सम्बन्ध बनाने के लिए भी होनी चाहिए। व्यक्तिगत या पारिवारिक आराधना आत्मिक विकास के लिए अति आवयश्क है, परन्तु संगठित आराधना से कुछ ऐसा मिलता है, जो व्यक्तिगत या पारिवारिक आराधना में नहीं मिल सकता। विश्वास बनाने की घटना में से संयुक्त योगदान संगति और परस्पर प्रोत्साहन की भावना को बढ़ाता है। यदि इकट्ठी हुई कलीसिया में फूट है तो उसमें ये चीज़ें नहीं मिलेंगी। यदि एक की प्राथमिकता कुछ और है और दूसरों की प्राथमिकता कुछ तो सीधे सम्बन्धों में कठिनाई आती है। आमतौर पर हमें इस बात का अहसास नहीं होता है कि ऊपर की ओर के सम्बन्ध बिगड़ने पर सीधे सम्बन्ध (यानी परमेश्वर के साथ हमारे निजी सम्बन्ध) भी खराब होते हैं।

4. *हमें कम सम्मानित सदस्यों को सम्मान देते हुए एक-दूसरे का ध्यान रखना आवश्यक है* (12:22-25; तुलना करें याकूब 2:1-13)। हो सकता है कि हम देह के उन अंगों की अनदेखी या उन्हें नज़रअंदाज करने की परीक्षा में पड़ें जो दिखने में हमारे जैसे नहीं हैं। याकूब ने धनवानों के प्रति पक्षपात दिखाने की समस्या पर विशेष रूप से बात की है। कलीसिया निर्धनों, अर्थात कम पसन्द किए जाने वाले या संसार की तरह निकाले हुए लोगों से सही बर्ताव नहीं करती। कलीसिया की सभा संसार के निकाले हुओं, दलितों और क्रूर समाज के लताड़े हुओं का आश्रय स्थल है। सभा में आना ताजी हवा में सांस लेने जैसा होना चाहिए। वहां हमें एक-दूसरे के प्रति चिन्ता और सबके लिए बराबर सम्मान मिलना चाहिए।

5. *हमें एक-दूसरे के साथ प्रेमपूर्वक व्यवहार करना चाहिए* (13:1-8)। एक मित्र के साथ यह चर्चा करने से पहले कि ये आयतें आराधना के बारे में क्या कहती हैं मैंने कभी ध्यान नहीं दिया था कि अध्याय 13 में *प्रेम* पर निबन्ध आराधना पर निर्देश के बीच आता है।[7] बेशक यह शिक्षा दूसरे क्षेत्रों में भी लागू होती है, पर संगठित आराधना में एक-दूसरे के साथ व्यवहार करने के ढंग संदर्भ विशेष रूप से है। इन मसीही लोगों का मुख्य काम प्रेम था (14:1)। प्रेम हमें पहले दूसरों की आवश्यकताओं और प्राथमिकताओं का ध्यान रखने के लिए विवश करता है। आराधना सभा में मसीही लोगों के व्यवहार पर लागू करते हुए अध्याय 13 पढ़ने पर मेरे लिए पूरा अध्याय एक नया अर्थ बताता है।

6. *हमें एक-दूसरे को सुधारने की इच्छा करना आवश्यक है* (14:3, 4, 5, 12, 17, 26, 31)। अध्याय 14 में अलग-अलग रूपों में मुख्य शब्द ''सुधार'' है। कम से कम सात बार, अलग-अलग संस्करणों में हम देखते हैं कि पौलुस सुधार के लिए आराधना की आवश्यकता पर ज़ोर देता है। ''सुधारना'' का अर्थ ''बनाना'' है। सुधार पिछले पांच नियमों का सामूहिक परिणाम होना चाहिए। जिसे शैतान और संसार तोड़ने की कोशिश करते हैं, आराधना उसे फिर से बना देती है। आराधना कलीसिया के लिए बोझ नहीं होनी चाहिए, बल्कि इससे कलीसिया बननी चाहिए।

7. *हमें सब काम सलीके से और सही ढंग से करने चाहिए* (14:40)। परमेश्वर न तो उलझन पैदा करता है और न किसी को उलझन में डालता है। आराधना सभा में अगर कोई उलझन है तो वह मनुष्य की पैदा की हुई है। यदि सभा में कोई ऐसी आत्मा घूम रही है जो उलझन पैदा करती है तो निश्चित है कि वह पवित्र आत्मा नहीं है।

क्या न करें

हमारी सबसे बड़ी चिन्ताओं में से एक यह होनी चाहिए कि हम सभा में आकर, सही भावनाओं में, सही शब्द कहकर सही गीत गाकर भी आराधना से चूके नहीं। ऐसा कई कारणों से हो सकता है:

पहला, हम इकट्ठे होने के गलत उद्देश्य के कारण आराधना नहीं कर रहे हो सकते। मत्ती 15:8 में यीशु ने यशायाह 29:13 से उद्धृत करते हुए यह चेतावनी दी: ''ये लोग होंठों से तो मेरा आदर करते हैं, पर उनका मन मुझसे दूर रहता है।''

दूसरा, हम आराधना नहीं कर रहे हो सकते क्यों हमारे जीवनों में पाप है। आमोस नबी ने एक ऐसी स्थिति का वर्णन किया, जिसने आराधना को अस्वीकार्य बना दिया। उसके समय के लोग पर्व के दिन मनाते, मेल बलियां लाते और आत्मिक गीत गाते थे, परन्तु परमेश्वर ने उनकी आराधना को स्वीकार नहीं किया, क्योंकि उनके जीवन भ्रष्ट थे (आमोस 5:21-27)।

तीसरा, हम आराधना नहीं कर रहे हो सकते क्योंकि हमने किसी भाई का दिल दुःखाने के लिए कुछ किया है। यीशु ने कहा, ''इस लिए यदि तू अपनी भेंट वेदी पर लाए, और वहां तू स्मरण करे, कि तेरे भाई के मन में तेरी ओर से कुछ विरोध है, तो अपनी भेंट वहीं वेदी के सामने छोड़ दे। और जाकर पहिले अपने भाई से मेल कर; तब आकर अपनी भेंट चढ़ा'' (मत्ती 5:23, 24)।

दिवंगत एंडी टी. रिची जूनियर, जिन्होंने कई साल तक ''कलीसिया की आराधना'' विषय पर हार्डिंग यूनिवर्सिटी में पढ़ाया, ने कहा ''दैनिक जीवन उससे मेल न खाने पर आराधना परमेश्वर को स्वीकार्य नहीं होती।''[8] परमेश्वर ने आराधना को हमारे जीवन का ढंग बदलने के लिए बनाया। आराधना हमारे भीतर जीवन के उन गुणों को विकसित करती है, जो हमें परमेश्वर के स्वरूप में ढालते और बनाते हैं। परमेश्वर ने हमें आराधना के लिए इसलिए नहीं बुलाया कि उसे इसकी आवश्यकता है। वह सर्वशक्तिमान और अपने आप में सम्पूर्ण है। उसे हमारी किसी भेंट की आवश्यकता नहीं है। उसने हमें आराधना के लिए इसलिए बुलाया है, क्योंकि *हमें* इसकी आवश्यकता है। आराधना में वह हमें आत्मिक महानता के लिए बुलाता है।

सारांश

मेरा उद्देश्य आराधना के विषय में उठने वाले विभिन्न मुद्दों में उलझना नहीं है। यदि सभी नहीं तो इनमें से अधिकतर मुद्दे हृदय पर और आराधना की मुख्य बात पर ध्यान केन्द्रित करने से अलोप हो जाएंगे। आराधना किसी ढंग या शैली की बात नहीं है। यह मेरी पसन्द या प्राथमिकता की बात नहीं है, बल्कि परमेश्वर की पसन्द की बात है। आराधना सभा हम में से हर किसी के अपनी खूबी दिखाने के लिए नहीं बनाई गई, बल्कि परमेश्वर के सामने हर किसी को लाने के लिए बनाई गई है। आराधना ''कलीसिया के बाहर के लोगों'' से जुड़ना भी नहीं है। नये नियम की आराधना मसीही लोगों की गतिविधि है। इसका अर्थ यह नहीं है कि हमें अपनी सभाओं में आने वाले मेहमानों की आवश्यकताओं या चिन्ताओं के प्रति संवेदनशील नहीं होना चाहिए, परन्तु हमें यह अहसास होना आवश्यक है कि मेहमान जो परमेश्वर से मिला नहीं है या आराधना का असली उद्देश्य उसके जीवन में जहां वह है, हर बात नहीं पाएगा।

टिप्पणियां

[1]ए. डब्ल्यू. टोज़र, *वटएवर हैपन्ड टू वरशिप ?,* संकलन व संपादन गैरलड बी. स्मिथ (कैंप हिल, पेनसिलवेनिया: क्रिश्चियन पब्लिकेशंस, 1985), 37. [2]एल्फ्रेड पी. गिबस, *वरशिप: द क्रिश्चियन'स हाइऐस्ट आकूपेशन* , दूसरा संस्करण (कैंसस सिटी, कैंसस: वाल्टरिक पब्लिशर्स, तिथि नहीं), 15. [3]वहीं 15-17. [4]रिक्क एचले, ''वट ऐ लेफ्ट-ब्रेनड प्रीचर हैज़ लर्नड,'' पार्ट-1, *पैपरडीन लैक्चर्स* (मैलिबू, कैलिफोर्निया: पैपरडीन यूनिवर्सिटी मीडिया सेंटर, 1998), कैसेट। [5]टोज़र, 51-52. [6]''मेरे स्मरण में'' पाठ में ''प्रभु के दिन का भोज'' और अतिरिक्त लेख में ''प्रभु भोज कितनी बार लेना चाहिए'' की चर्चा देखें। [7]लब्बॉक, टैक्सस के गैरी वाकर से मेरी बातचीत में उन्होंने यह बात की कि ''प्रेम'' वाला अध्याय आराधना पर विस्तृत निर्देश के मध्य में आता है। [8]एंडी टी. रिची जूनियर, क्लास लैक्चर नोट्स, द वरशिप ऑफ़ द चर्च, हार्डिंग यूनिवर्सिटी, तिथि नहीं।